दलित लोकगाथा ‘*नटुआ नाच*’ के प्रदर्शन में प्रतिरोध की भूमिका

Role of Resistance in Performance of Dalit Lokgatha ‘Natua Naach’

शोध प्रस्ताव

Research Proposal

Submitted by:

रोहित कुमार

Rohit Kumar

Ph.D Scholar - Drama and Theatre Arts

Registration No : VB- 3201 of 2016-17

Admission Date- 27/03/2017

Email-id: rohithirawalwala@gmail.com

Name of the Guide/Supervisor- Mrityunjay Kumar Prabhakar

Drama and Theatre Arts

Department of Rabindra Sangit, Dance and Drama

Sangit Bhavana, Visva-Bharati, Santiniketan

दलित लोकगाथा *‘नटुआ नाच’* के प्रदर्शन में प्रतिरोध की भूमिका

Role of Resistance in Performance of Dalit Lokgatha ‘Natua Naach’

Key Words-

सामूहिक स्मृति(collective memory)

अस्मिता(identity)

अधीनस्थ वर्ग(Subordinate Class)

सांस्कृतिक वर्चस्वाद(Cultural Hegemony)

भूमिका(Introduction)

बिहार की लोकनाट्य परंपरा का एक रूप है **‘नटुआ नाच’**। इस नटुआ नाच में ‘**दलित लोकगाथाओं**’ का नाट्य मंचन होता है। दलित लोकगाथाओं का नटुआ नाच दलित वर्ग के लिए अभिमान और उच्च जातियों के लिए क्रोध व टकराहट का कारण बनता है। नटुआ नाच के मंचन में **सामूहिक स्मृति***(collective memory),* समुदाय विशेष की **अस्मिता***(identity)* एवं वर्तमान राजनैतिक परिस्थितियों के साथ-साथ सामंतवाद के प्रति **प्रतिरोध**(ressistance) दिखाई देता है। सत्ताधारियों और उसके बिचौलियों द्वारा इस प्रतिरोधी कला का केवल राजनीतिक फायदे के लिए इस्तेमाल किया जाता रहा है, नहीं तो इसे कुंद करने की कोशिश की जाती रही है। जबकि बिहार के दलितों की चेतना में बसने वाली इन लोकगाथाओं की प्रदर्शनकारी ‘नटुआ नाच’ परंपरा को उनके मुक्ति-संघर्ष के रूप में देखने की जरूरत है।

नटुआ नाच के कलाकार मजदूर वर्ग से आते हैं। बिहार के हरेक क्षेत्र, समुदाय एवं जातियों की अपनी-अपनी परंपरागत लोकगाथाएँ हैं। बिहार में ‘दलित वर्ग’ के बीच भी लोकगाथाओं की सशक्त परंपरा रही है। बिहार के कुछ हिस्से में तमाम स्थानीय भाषाओं एवं बोलियों में दलितों द्वारा अपनी आकांक्षाओं, सपनों एवं संघर्षों को लोकगाथाओं को नटुवा नाच के जरिए अभिव्यक्त किए जाने की

परंपरा है। पौराणिक, प्रेमाख्यानक तथा वीरकथात्मक लोकगाथाओं का मंचन नटुवा नाच के मंच पर होता है। मंचित होने वाली अधिकांश लोकगाथाएँ मध्यकालीन सामाजिक घटनाओं पर आधारित है। जिसमें रेशमा-चुहड़मल, सलहेस, दीना-भद्री, मनसाराम और छेछनमल, लाला महाराज, जोति हरिया, अमरसिंग बरिया, लुकेसरी कथा, राजा ढोलन, गरीब दयाल सिंह, राजा हरिचन, हिरनी-बिरनी, आदि लोकगाथाएँ हैं। आज भी यह नटुवा नाच खूब प्रचलित है। समकालीन समय में भी यह नटुवा नाच दलित वर्ग के लिए मनोरंजन का साधन है।

‘‘नटुआ का अर्थ ‘अभिनेता या नर्तक’ होता है और नाच का अर्थ होता है ‘नृत्य’। लेकिन यहाँ नाच से अभिप्रेत नाट्य है न कि नृत्य। नट, नर्तक और अभिनेता पुरुषवाचक संबोधन है। अतः पुरुषों द्वारा अभिनीत (स्त्री पात्र का अभिनय भी पुरुष द्वारा किया जाता है) नाट्यरूपों को नटुआ नाच कहा गया है। नाट्य संबंधी ग्रंथ (वर्णरत्नाकर, ज्योतिरिश्वर ठाकुर) के साक्ष्यों के अनुसार बारहवीं शताब्दी से पंद्रहवीं शताब्दी के बीच नृत्य और नाट्य के लिए ‘नाच’ शब्द ही रूढ़ था।”[1] आज भी बिहार के लोकनाट्य परंपरा में नाट्य के लिए ‘नाच’ शब्द ही प्रचलित है। जैसे- हुड़ुक नाच (गोंड़ नाच) तथा बिदेसिया(लौंडा नाच) आदि।

दलित लोकगाथाओं का नटुआ नाच होना केवल मनोरंजक निष्पादन बस नहीं बल्कि एक राजनैतिक विमर्श है जबकि **'संस्कृति उद्योग' *(cultural industry)* के समय में कला को केवल चका-चौंध*(glamorously)* ही देखने का प्रचलन हो चला है। संस्कृति उद्योग *(culture industry)* के अपने अध्ययन में *Theodor Adorno* लिखते हैं कि...*“पूँजी, टेक्नॉलॉजी, संचार एवं लोकप्रियता के साथ-साथ कला के संबंधों में भारी बदलाव आया है। इस बदलाव ने कला में निहित उसके सामाजिक-राजनैतिक मूल्यों को ख़त्म कर सिर्फ उसके सौंदर्य (aesthetic) मूल्यों को उजागर करने का काम किया है। ऐसा होते ही कला सिर्फ मनोरंजन की वस्तु बन कर रह जाती है।”*[2]**

साहित्य पुनरावलोकन(Literature Review)

[1] भारती ओमप्रकाश(2007) बिहार के पारंपरिक नाट्य, उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केंद्र, इलाहाबाद

[2] Adorno, Theodor*(2008)Culture Industry, Palgrave Macmilan, London*

.

इस शोध विषय से संबंधित पुस्तक जिनका अध्ययन किया गया है- **ओमप्रकाश भारती** की पुस्तक **'बिहार के पारंपरिक नाट्य'(2007)** में नटुवा नाच को लेकर एक अध्याय है। जिसमें नटुवा नाच बिहार और नेपाल के मैथिली भाषी अंचल का जनप्रिय लोकनाट्य रूप बताया है। नटुवा नाच का मंचन प्रायः रात्रि में फसलोत्सव, विवाह, दशहरा, दिवाली, छठ, मेला एवं सामाजिकोत्सवों जैसे पर्व का मुख्य आकर्षण नटुवा नाच ही होता है। फ़िल्म, टेलीविजन तथा मनोरंजन के अन्य इलेक्ट्रोनिक माध्यम से आए बदलाव के बावजूद नटुवा नाच की लोकप्रियता तनिक भी कम नहीं हुई है, बल्कि नाट्य दलों की संख्या और मिलने वाले मानदेय की राशि में दिनोंदिन बढ़ोतरी हुई है। मैथिली भाषी अंचल में लगने वाले मेले में फिल्म, आरकेस्ट्रा, बाईजी का नाच, कव्वाली तथा नटुवा नाच का प्रदर्शन यदि एक साथ हो रहा हो तो सबसे अधिक दर्शक नटुवा नाच को देखे जा सकते हैं। आज लगभग पाँच-छह सौ नाट्य दल उतरी बिहार और नेपाल के दक्षिण पूर्वी अंचलों में सक्रिय है। नटुवा नाच के नामकरण उद्भभव काल और परिस्थितियों को भी बताया है। रंगमंडल, पूर्वरंग, मंच व्यवस्था, प्रकाश संयोजन, रूपसज्जा, वेशभूषा, दृश्यवंद्, अभिनय विधान, गीत, नृत्य एवं वाद् का भी जिक्र किया है। विशेष रूप से कथानक पर लिखते हैं कि नटुवा नाच के अधिकांश कथानक लोगाथाओं से लिए गए हैं। लोकगाथा बनने के पीछे सामाजिक-राजनैतिक संघर्ष के बारे में बताया है। इसी क्रम में आगे लिखते हैं कि मध्यकालीन समाज राजनीतिक रूप से खंडित था। राजा या सुल्तान सूबे को छोटे-छोटे टुकड़ों में खंडित कर जागीदार और सामंतों के अधीन कर दिया था। इन सामंत और जागीदारों का सामाजिक सरोकार सिर्फ कर उगाही तक था। इस व्यवस्था के प्रति कई संगठित और असंगठित विद्रोह भी हुए। इस तरह के विद्रोह निर्ममता से कुचल भी दिए गए। लेकिन लोक मानस पर इन घटनाओं का गहरा और व्यापक असर पड़ा। जागीदारों और सामंतों से लड़नेवाले, समाज के असली लोकनायक हुए। लोक कवियों ने इन नायकों के जीवन चरित्र को लेकर कई संघर्ष गाथाओं की रचना की, जो लोकगाथा के रूप में लोककंठ में प्रवाहमान है। नटुवा नाच के प्रयोक्ता भी उसी वर्ग से हुए, जिस वर्ग के ये लोकनायक और लोककवि थे। नटुवा नाच के कलाकारों ने बड़ी सहजता से इन वीरगाथाओं का नाट्य रूपांतरण किया। अध्याय के अंतिम पैराग्राफ में लिखते हैं कि अधिकांश भारतीय कलारूप अपने संरक्षक या मालिक कि भावनाओं और आकांक्षाओं का संपोषण करती है या उसके दबाव को झेलती या महसूस करती रही है। लेकिन नटुवा नाच के विश्लेषण से स्पष्ट है कि यहाँ सर्वहारा दर्शकों कि अभिरुचि और आकांक्षाओं के अनुरूप ही इस नाट्य रूप का ढाँचा विकसित हुआ है। इसलिए यह परंपरा जीवंत है।

बिहार की नाटकीय लोक विधाएँ- डॉ. महेश कुमार सिन्हा(2001) के इस पुस्तक में लोकनाट्य के अवधारणा तथा स्वरूप, अभिनय तथा रंगमंच, बिहार के ग्रामीण जीवन, बिहार की विभिन्न आदिम जातियों के साथ संस्कारों तथा उत्सव त्योहारों में उपलब्ध नाटकीय तत्वों पर प्रचुर सामग्रियाँ पढ़ने को मिली है। बिहार के भोजपुरी क्षेत्र, मगही क्षेत्र, मैथिली, अंगिका तथा वज्जिका क्षेत्र को लेखक ने अपने अध्ययन क्षेत्र के विषय के रूप में रखा है। इनके अतिरिक्त 'बिहारी लोकनाटकों की विशेषताएँ' बिहारी लोकनाटकों पर आधुनिक प्रभाव साथ ही अभिनय शैली, नाट्य शिल्प तथा मंच-व्यवस्था भी लेखक के अध्ययन के विषय हैं। इन सभी अध्यायों में किसी-न-किसी रूप में लोकगाथाओं का जिक्र किया है। इस पुस्तक में बिहार के हरेक जाति और उसके पारंपरिक कार्य और सांस्कृतिक कार्य को भी बताया गया है। बिहार के हरेक जिला और उसके भाषायी आधार पर लोकनाट्य की चर्चा है।

लोकगाथा: परिवर्तन की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति- हसन इमाम(2014) के इस पुस्तक में बिहार के मेहनतकश जनता के भौतिक जीवन में परिवर्तन की जो आकांक्षा है उसका प्रतिबिंबन देखने को मिलता है। लोकगाथाओं में मौजूद परिवर्तन के चरित्र और विस्तार की पड़ताल की गई है। इस पुस्तक में बिहार के बहुत सारे दलित लोकगाथा के कथानक मौजूद हैं। लेखक लिखते हैं कि अगर हम आज कि बात करें तो आज भी देश के विभिन्न हिस्सों में दलित जातियों में लोकप्रिय उनकी परंपरागत लोकगाथाएँ, मौखिक रूप में ही सही, उनके बीच जिंदा है जो न केवल व्यवस्था कि आलोचना की सदियों पुरानी चली कलात्मक यात्रा को रेखांकित करती है बल्कि यह दलितों कि मानसिक बनावट के साथ-साथ उनकी अस्मिता एवं पहचान के संघर्ष की कहानी भी बयां करती हैं। लोकगाथाओं की यह मौखिक परंपरा हमें वास्तविक इतिहास का बोध भी कराती है और उसकी आलोचना करते 'न्यायसंगत इतिहास' रचना के लिए प्रेरित भी।

दलित लोकगाथाओं में प्रतिरोध- हसन इमाम और जोस कलापुरा(2009) के इस किताब में बिहार के दलित लोकगाथाओं में प्रतिरोध के तत्त्वों की तलाश एवं उनकी विवेचना का विस्तृत विवरण है। लेखक हसन इमाम एक रंगकर्मी हैं और एक रंगकर्मी होने के नाते थिएटर के नजरिये से भी लिखने की कोशिश की है। दलित, लोकगाथा एवं प्रतिरोध इन तीनों के शाब्दिक एवं वैचारिक अर्थों की समकालीन संदर्भ में अलग-अलग विवेचना भी की है। प्रतिरोध के उपरोक्त तत्त्वों को रेखांकित करते हुए मौजूदा समय की शोषक एवं वर्चस्ववादी विचारधाराओं के मुकाबले में इनकी वैचारिक उपयोगिता की तलाश की कोशिश भी है। इसी क्रम में आगे लिखते हैं कि बिहार के दलितों, शोषितों एवं वंचितों की परंपरा एवं चेतना में बसने वाली इन संघर्ष-गाथाओं को उनके आज के मुक्ति-संघर्ष के

लिए एक अतिरिक्त वैचारिक खुराक के रूप में दिखता है। हसन इमाम और जोस कलापुरा ने इस पुस्तक में पारंपरिक शोध पद्धति से बाहर निकलकर एक नया दृष्टिकोण अपनाने की भी कोशिश की है। इस किताब में लिखते हैं कि...*"आज के संदर्भ में ये लोकगाथाएँ सामाजिक उत्पीड़न एवं साम्राज्यवादी वैश्विक हमलों के खिलाफ दलित मुक्ति संघर्ष में एक सांस्कृतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल की संभावनाओं की तलाश है।"*

Documenting Dissent- Badri Narayan(2001) इस पुस्तक में लेखक ने लोकगाथा रेशमा-चुहड़मल का भिन्न-भिन्न प्रस्तुति के दरम्यान तमाम तरह के उलझन, लड़ाई, राजनीति, अस्मिता की लड़ाई आदि का जिक्र है। इसके अध्याय इस तरह से हैं-

- *Documenting Dissent*
- *Mela, Leela and Politics*
- *Heroes, Histories and Booklets*
- *Myth, Memory and Political Discourse* इस शोध पुस्तक में लोकगाथा रेशमा-चुहड़मल नाच के संदर्भ को लेकर विस्तृत रूप से प्रतिरोध की राजनीति पर विमर्श है।

प्रतिरोध की संस्कृति- बद्री नारायण(2012) इस पुस्तक में लेखक ने प्रतिरोध के कई आयाम दिखाने कि कोशिश की है जो इस शोध विषय को मजबूत बनायेगी। पुस्तक के शुरू में ही लिखा है कि मानवीय समाज यूँ तो सामंजस्य पर टिका होता है। किन्तु प्रतिरोध उसका एक महत्वपूर्ण वैयक्तिक एवं सामाजिक भाव होता है। दमित समूह, समुदाय एवं संस्कृतियाँ अपने ऊपर सतत हो रहे दमन के विरुद्ध प्रतिरोध कर रही होती हैं। यह प्रतिरोध कई बार उनकी स्वतः स्फूर्ति अभिव्यक्ति होती है और कई बार स्रातजिक। लेकिन यह दोनों ही रूपों में ये प्रतिरोध कि भाव उनके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक प्रारूपों में अभिव्यक्त हो रहे होते हैं।

शोध विषय से संबंधित कुछ **पत्रिका/वृत** का भी अध्ययन करने कि कोशिश की गई है। जो क्रमशः इस प्रकार है-

रंगवार्ता, अगस्त-अक्टूबर 2012(त्रैमासिक) अश्विनी कुमार पंकज(संपादक)इस पत्रिका में दलित रंगमंच क्या है, दलित रंगमंच का इतिहास, दलित चेतना और मराठी का दलित रंगमंच, मलयालम का दलित रंगमंच, दलित कलाओं पर सवर्ण का वर्चश्व, पंजाबी दलित नाट्य, हिन्दी दलित

नाटक इत्यादि। इस पत्रिका में तीन लोकगाथाओं(रेशमा-चुहड़मल, सलहेस, दीना-भद्री) का मंचन का जिक्र है। दलित रंगमंच पर काफी विमर्श है जो कि इस शोध विषय के लिए महत्वपूर्ण है।

रंग प्रसंग, जुलाई-सितंबर 1999 प्रयाग शुक्ल (संपादक) इस पत्रिका के एक अध्याय में लोकनाट्य के विविध रूप बतायें गयें है जिसमें- उत्तर भारत के लोकनाट्यों में विजातीय प्रभाव, लोकनाट्ययों में विकृतियाँ, आदान-प्रदान, विषयाधारित लोकनाट्य, लोकनाट्यों का नृत्य एवं संगीत पक्ष, लोकनाट्यों की शब्द शक्ति, लोकनाट्य की धुनें, लोकनाटक और लोकगाथाएँ, लोकनाट्यों की स्वभावगत विशेषताएँ इत्यादि।

कुछ **On Line** सामग्री भी अध्ययन की गई है जिसमें-

Muse India- Badri Narayan Tiwari(2014) लोकगाथा 'रेशमा-चुहड़मल' के मंचन को लेकर भिन्न-भिन्न प्रकार के अध्याय हैं जिनमें–

- *Honour, violence and Conflicting Narratives- A study of Myth and Reality*
- *Theatrical Performance Inciting Violence*
- *Orality, Festivity and Recurrence*
- *Multiple Text*
- *Politics and Polemics of the Multiple text*

बिहार के प्रदर्शनकारी मंजूषा*(Article)* सुमन कुमार(2014) इसमें बिहार के तमाम प्रचलित लोक देवता, बिहार की भाषा, बिहार की गाथा, बिहार के लोकनाट्य, नृत्य, संगीत, अनुष्ठान और मेला के बारे में बताया गया है।

शोध उद्देश्य (Research Objective)

नटुवा नाच का विस्तृत अध्ययन, डॉक्युमेंटेशन और नटुवा नाच में दलित लोकगाथा के प्रदर्शन में प्रतिरोध के आयाम का अवलोकन। बिहार के दलित लोकगाथाओं का नटुवा नाच दलित वर्ग के लिए अभिमान का और उच्च जातियों के लिए क्रोध व टकराहट का परस्पर अध्ययन। नटुवा नाच पर आधुनिकता के प्रभाव का अध्ययन के साथ-साथ समकालीन समाज में नटुवा नाच की भूमिका और उसके प्रति लोगों का दृष्टिकोण का अध्ययन।

शोध प्रश्न(Research Questions)

- आखिर किन कारणों से दलित लोकगाथाओं का नटुआ नाच किसी समुदाय विशेष की रचनात्मक अभिव्यक्ति से लेकर राजनीतिक अभिव्यक्ति का रूप ले लेता है तथा किसी जाति/समुदाय विशेष के लिए सामाजिक सम्मान तो किसी जाति/समुदाय विशेष के लिए उसके वर्चस्व को चुनौती होता है।
- क्या यह लोकतान्त्रिक होने की प्रक्रिया में अतीत के स्मृतियों की विवेकशीलता (rationalization) है? क्योंकि इस तरह के मंचनों में समय के साथ बदलाव आया है।"[3]
- क्यों सत्ताधारियों द्वारा दलित लोकगाथाओं के नायक को भगवान के रूप में मंदिर में स्थापित करने तक सीमित है?
- फिल्म, टीवी, सीडी एवं कैसेट कल्चर ने किस प्रकार से नटुआ नाच को प्रभावित किया है।
- नटुवा नाच के मंचन के प्रति समकालीन समाज का दृष्टिकोण क्या है।
- क्या यह दलित लोकगाथाओं का नटुवा नाच भौगोलिक व्यापकता तथा इनके अंदर प्रतिरोध के तत्वों और उनकी निरंतरता को रेखांकित करता है?
- क्या दलित लोकगाथाओं का नटुआ नाच किसी सामाजिक संरचना के अंदर सामुदायिक प्रतिरोध एवं नई श्रेणीबध्द*(new hierarchical order)* को बनाता है?
- क्या नटुवा नाच के मंचन में आपसी टकराहटें भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों के उभार और वैश्विक परिस्थितियों में साम्यवादी विचारधारा के विघटन से जुड़ी हुई हैं?
- वर्तमान समय में जब लाभ कमाऊँ मनोरंजन के लिए कलाओं में फेरबदल कर दर्शकों के सामने जो परोसा जा रहा है, ऐसे में यह देखना काफी रोचक काम होगा कि लोक नाट्य परंपरा में प्रमुखता से लोकगाथाओं का नटुवा नाच केवल मनोरंजन है या मनोरंजन के साथ-साथ एक राजनैतिक विमर्श है?

<u>संभावित अध्याय</u>

भूमिका

अध्याय- 1: शोध कार्य एवं अध्ययन पद्धति

---
[3] Narayan Badri(2001) *Documenting Dissent,* Indian Institute of Advanced Study, Shimla.

अध्याय- 2 : 'नटुआ नाच' परंपरा का इतिहास एवं स्वरूप

अध्याय- 3 : 'नटुआ नाच': प्रस्तुति की प्रक्रिया और सौन्दर्य

(नृजाति वर्णन)

3.1 प्रस्तुति प्रक्रिया

3.2 दर्शक और स्थान

3.3 मंच विधान/दृश्य विन्यास

3.4 अभिनय

अध्याय- 4 : दलित लोकगाथा और प्रतिरोध का स्वरूप

(चयनित लोकगाथा)

4.1 दलित

4.2 लोकगाथा

4.3 प्रतिरोध

4.4 दलित लोकगाथा में प्रतिरोध

अध्याय- 5 : 'नटुआ नाच' का वर्तमान स्वरुप और संघर्ष

उपसंहार

परिशिष्ट

संदर्भ-ग्रंथ सूची

शोध प्रविधि (Research Methodology)

इस शोध विषय पर कार्य करने के लिए क्षेत्र में जाकर प्रदर्शन का अवलोकन करना पड़ेगा। इसके लिए उपयुक्त प्रविधि जिसमें गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक तथ्यों के लिए एथनोग्राफी का प्रयोग करना उचित लग रहा है। थिएटर और परफॉर्मेंस के पद्धति को ध्यान में रखकर व्यावहारिक तौर पर शब्दों, मुद्राओं*(gestures)* के प्रतीकात्मक व्यवस्थाओं को संग्रह कर समझने की कोशिश की जायेगी। शोध कार्य को अपने शोध विषय से संबंधित तथ्यों एवं सूचनाओं को संकलित किया जायेगा। दलित लोकगाथा 'नटुआ नाच' के प्रदर्शन में उसके प्रतिरोध को मापने के लिए उसके अंदर की अभिव्यक्ति को देखने के लिए इन सभी प्रविधि को लागू करना सही होगा।

प्राथमिक स्रोत*(Primary Data)*

- शोध क्षेत्र में मंचन को सहभागी अवलोकन(participant observation) के रूप में अध्ययन किया जायेगा।
- मंचन में सामाजिक तनावों एवं कठिनाइयों को दर्ज किया जायेगा।
- इसमें गहन साक्षात्कार(intense interview) और
- 'विमर्श–विश्लेषण' का भी सहारा लिया जायेगा।

व्यक्तिगत साक्षात्कार कर तथ्यों का संकलन किया जायेगा। साथ-ही-साथ तथ्यों के प्रस्तुतीकरण के लिए वीडियो और छायाचित्र सहयोग लिया जायेगा।

नटुआ नाच में दलित लोकगाथा एवं प्रतिरोध का जो विस्तृत वैचारिक आयाम और आह्वान है, इसकी पड़ताल के लिए बिहार के तीनों भाषाई क्षेत्रों जिसमें **मैथिली, मगही एवं भोजपुरी क्षेत्र में** दलित लोकगाथाओं का नटुवा नाच करने वाले कलाकारों, देखने वाले दर्शकों, न देखने वाले दर्शकों, लोकगाथाओं एवं लोकलाओं पर सोचने, लिखने और रंगकर्म करने वालों से तथ्यों की जानकारी ली जाएगी। इन सभी से प्रचलित बिहार के प्रमुख दलित लोकगाथा जिसका नटुआ नाच के मंच पर ज्यादा मंचन होता है को चयन कर शोध को समृद्ध करने की कोशिश की जाएगी।

द्वितीय स्रोत*(Secondary data)*

द्वितीय स्रोत के अंतर्गत संबंधित विषय से पूर्व में किए गए अध्ययन, पत्रिकाएँ, विषय से संबंधित समाचार, संस्थानों से पुराने सीडी, डीवीडी और वेबसाइट, यूट्यूब इत्यादि का प्रयोग किया जायेगा। अंतरनुशासनिक*(interdisciplinary)* और *सबलटर्न स्टडीज़*, सांस्कृतिक अध्ययन और समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जायेगा। लोकगाथाओं से जुड़े अध्ययनों में मनोविज्ञान के स्केलिंग का भी सहारा लिया जायेगा।

संदर्भ-ग्रंथ सूची

आधार संदर्भ सूची

1. नारायण बद्री(2012) प्रतिरोध की संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
2. सिन्हा, डॉ. महेश कुमार(2001) बिहार की नाटकीय लोकविधाएँ, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना-800016
3. वर्मा डॉ उषा(2014) लोकरंग: बिहार, ,डी. एस. बुक्स डिस्ट्रीब्यूटर,पटना-800006

4. दास डॉ. रेखा (1994) बिहार के लोकनाटकों की प्रमुख शैलियों का विवेचन, सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली – 110007
5. उपाध्याय डॉ. कृष्णदेव (2004) लोक साहित्य की भूमिका, साहित्य भवन प्रकाशन लि. इलाहाबाद
6. बालेर ए, जगदीशचंद्र पांडे (अनुवादक) 1985, कम्युनिज़्म और सांस्कृतिक विरासत, प्रगति प्रकाशन मास्को
7. प्लेखानोव गियोर्गी, विश्वनाथ मिश्र (अनुवादक) 2003, कला के सामाजिक उद्गम, राजकमल, नई दिल्ली
8. कमला गणेश एवं ठक्कर उषा (संपादक) 2005, कल्चर एंड मेकिंग ऑफ आइडेंटिटी इन कंटेम्परेरी इंडिया, सेज, नई दिल्ली
9. चौधरी प्रसन्न कुमार एवं श्रीकांत (2005) *स्वर्ग पर धावा*, बिहार में दलित आंदोलन 1912-2000, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली-110002
10. Taylor Dina (2006) Performance and/as History, The Drama Review Volume 50, Number 1(T189) Spring, Published by the Mit Press
11. *Kelleher Joe (2009)Theatre and Politics, palgrave macmillan, London*
12. *Carlson Marvin (1990) Theatre Semiotics Sign of Life, indian university press*
13. *Rebellalo Dan (2009) Theatre and Globalization, Dan Pebellalo, London*

सहायक संदर्भ सूची

14. भारती, ओमप्रकाश(2007) बिहार के पारंपरिक नाट्य, उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केंद्र, इलाहाबाद(उत्तर प्रदेश)
15. इमाम, हसन एवं कलापुरा जोस(2009) *दलित लोकगाथाओं में प्रतिरोध,* दानिश बुक्स. दिल्ली.
16. इमाम हसन(2015)लोकगाथा-परिवर्तन की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति, जागृति पब्लिकेशन, पटना-दिल्ली

17. Adorno, Theodor*(2008) Culture Industry, Palgrave Macmilan, London*

18.Narayan, Badri(2001) *Documenting Dissent,* Indian Institute of Advanced Study, Shimla.

पत्र-पत्रिकाएँ

*19.*शुक्ल प्रयाग (संपादक) जुलाई-सितंबर 1999 रंग प्रसंग, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली

*20.*पतंग डॉ. अनिल (संपादक) 9 वाँ अंक, रंग अभियान, नाट्य विद्यालय, बेगूसराय(बिहार)

*21.*दैनिक जागरण (अख़बार) 04/04/2015 पटना

*22.*राष्ट्रीय सहारा (अख़बार) 04/04/15 पटना

23.पंकज अश्विनी कुमार(संपादक) अगस्त-अक्टूबर 2012 रंगवार्ता, (त्रैमासिक) राँची, झारखंड

वैबसाइट

http://www.indiaculture.nic.in/literature-folklore-3/18/15

http://www.folklore.ee/folklore/vol13/bihar.htm-7/4/2014

http://www.museindia.com/focuscontent.asp?issid=38&id=2726-7/5/2014

http://culturebihar.blogpost.in/-7/5/2014